Chapter बासठ

ऊषा-अनिरुद्ध मिलन

इस अध्याय में अनिरुद्ध तथा उषा के मिलन एवं बाणासुर के साथ अनिरुद्ध के युद्ध का वर्णन हुआ है।

राजा बलि के एक सौ पुत्रों में बाणासुर सबसे बड़ा था। वह शिवजी का महान् भक्त था और वे बाण का इतना पक्ष लेते थे कि इन्द्र जैसे देवता भी उसकी चाकरी किया करते थे। एक बार बाणासुर ने शिवजी के ताण्डव-नृत्य करते समय अपने एक हजार भुजाओं से संगीत-वाद्य बजा कर उन्हें प्रसन्न कर लिया। बदले में शिवजी ने उसे मुँहमाँगा वर दिया। बाण ने शिवजी से याचना की कि वे उसकी नगरी के रक्षक बन जाँय।

एक दिन बाण को युद्ध करने का मन हुआ तो उसने शिवजी से कहा: ''आपको छोड़कर पूरे

संसार में कोई योद्धा इतना बलशाली नहीं है, जो मुझसे युद्ध कर सके। इसलिए आप द्वारा प्रदत्त ये हजार बाहुएँ मेरे लिए केवल भार हैं।'' इन शब्दों से क्रुद्ध होकर शिवजी बोले, ''तुम्हारा यह गर्व तब चूर होगा जब तुम मुझ जैसे बल वाले से युद्ध करोगे। तब तुम्हारे रथ की ध्वजा टूट कर भूमि पर गिर जायेगी।''

एक बार बाणासुर की पुत्री उषा ने स्वप्न में एक प्रेमी को देखा। ऐसा कई रातों तक लगातार चलता रहा किन्तु एक दिन वह प्रेमी सपने में नहीं आया। अत: वह जोर से उस प्रेमी से घबराहट में बोलती हुई जाग पड़ी किन्तु जब उसने अपने पास अपनी दासी को देखा तो वह घबड़ा उठी। उषा की सखी चित्रलेखा ने उससे पूछा कि तुम किसको बुला रही थी तो उषा ने उसे सारी बातें बता दीं। उषा के स्वप्न-प्रेमी के विषय में सुनकर चित्रलेखा ने गन्धर्वों, अन्य दैवी पुरुषों एवं विभिन्न वृष्णिवंशियों के चित्र खींच कर अपनी सखी के कष्ट को कम करना चाहा। उसने उषा से कहा कि वह सपने में देखे गये पुरुष को चुन ले तो उषा ने अनिरुद्ध के चित्र की ओर संकेत किया। चित्रलेखा में योगशक्ति थी अत: वह तुरन्त जान गई कि उसकी सखी ने जिस युवक की ओर इंगित किया है, वह कृष्ण का पौत्र अनिरुद्ध है। तब उषा अपनी योगशक्ति द्वारा आकाश-मार्ग से उड़ कर द्वारका गई, अनिरुद्ध को खोज निकाला और उसे बाणासुर की राजधानी शोणितपुर लेकर लौट आई। उसने उसे लाकर उषा को सौंप दिया।

इच्छित पुरुष को पाकर उषा अपने उस निजी कक्ष में जिसमें कोई व्यक्ति नहीं जा सकता था, स्नेहपूर्वक उसकी सेवा करने लगी। कुछ काल बाद अन्त:पुर की रक्षिकाओं को उषा के शरीर में संभोग के चिह्न दिखे तो वे दौड़कर बाणासुर को बताने गईं। वह अत्यधिक विचलित हो उठा और अनेक अंगरक्षकों समेत अपनी पुत्री के कक्ष में भागा हुआ पहुँचा। उसके आश्चर्य का ठिकाना न रहा जब उसने अनिरुद्ध को वहाँ देखा। जब अंगरक्षकों ने उस पर आक्रमण किया, तो उसने अपनी गदा से कइयों का काम तमाम कर दिया। फिर तो शक्तिशाली बाणासुर ने उसे अपने नागपाश से बाँध लिया। उषा बेचारी शोक से विह्वल हो उठी।

श्रीराजोवाच

बाणस्य तनयामूषामुपयेमे यदूत्तमः ।
तत्र युद्धमभूद्घोरं हरिशङ्करयोर्महत् ।
एतत्सर्वं महायोगिन्समाख्यातुं त्वमर्हसि ॥ १ ॥

शब्दार्थ

श्री-राजा उवाच—राजा (परीक्षित महाराज) ने कहा; बाणस्य—बाणासुर की; तनयाम्—पुत्री; ऊषाम्—उषा को; उपयेमे—ब्याहा; यदु-उत्तमः—यदुओं में श्रेष्ठ (अनिरुद्ध ने); तत्र—उसी सन्दर्भ में; युद्धम्—युद्ध; अभूत्—हुआ; घोरम्—भयावह; हरि-शङ्करयोः—हरि (कृष्ण) तथा शंकर (शिव) के बीच; महत्—महान्; एतत्—यह; सर्वम्—सब; महा-योगिन्—हे महान् योगी; समाख्यातुम्—बतलाने के लिए; त्वम्—तुम; अर्हसि—योग्य हो।

राजा परीक्षित ने कहा : यदुओं में श्रेष्ठ (अनिरुद्ध) ने बाणासुर की पुत्री ऊषा से विवाह किया। फलस्वरूप हरि तथा शंकर के बीच महान् युद्ध हुआ। हे महायोगी, कृपा करके इस घटना के विषय में विस्तार से बतलाइये।

श्रीशुक उवाच
बाणः पुत्रशतज्येष्ठो बलेरासीन्महात्मनः ।
येन वामनरूपाय हरयेऽदायि मेदिनी ॥
तस्यौरसः सुतो बाणः शिवभक्तिरतः सदा ।
मान्यो वदान्यो धीमांश्च सत्यसन्धो दृढव्रतः ।
शोणिताख्ये पुरे रम्ये स राज्यमकरोत्पुरा ॥
तस्य शम्भोः प्रसादेन किङ्करा इव तेऽमराः ।
सहस्रबाहुर्वाद्येन ताण्दवेऽतोषयन्मृडम् ॥ २ ॥

शब्दार्थ

श्री-शुकः उवाच—श्रीशुकदेव गोस्वामी ने कहा; बाणः—बाण; पुत्र—पुत्रों में; शत—एक सौ; ज्येष्ठः—सबसे बड़ा; बलेः—महाराज बलि के; आसीत्—था; महा-आत्मनः—महात्मा; येन—जिसके (बलि) द्वारा; वामन-रूपाय—वामनदेव के रूप में; हरये—भगवान् हरि को; अदायि—दी गई; मेदिनी—पृथ्वी; तस्य—उसके; औरसः—वीर्य से; सुतः—पुत्र; बाणः—बाण; शिव-भक्ति—शिवजी की भक्ति में; रतः—स्थिर; सदा—सदैव; मान्यः—सम्मानित; वदान्यः—दयालु; धी-मान्—बुद्धिमान; च—तथा; सत्य-सन्धः—सत्यवादी; दृढ-व्रतः—अपने व्रत में दृढ़; शोणित-आख्ये—शोणित नामक; पुरे—नगर में; रम्ये—सुहावने; सः—वह; राज्यम् अकरोत्—अपना राज्य बनाया; पुरा—प्राचीनकाल में; तस्य—उस; शम्भोः—शम्भु (शिव) की; प्रसादेन—खुशी से; किङ्कराः—दास; इव—मानो; ते—वे; अमराः—देवतागण; सहस्र—एक हजार; बाहुः—बाहें; वाद्येन—बाजा बजाने से; ताण्डवे—उनके ताण्डव-नृत्य करते समय; अतोषयत्—प्रसन्न कर लिया; मृडम्—शिवजी को।

शुकदेव गोस्वामी ने कहा : बाण महान् सन्त बलि महाराज के एक सौ पुत्रों में सबसे बड़ा था। जब भगवान् हरि वामनदेव के रूप में प्रकट हुए थे तो बलि महाराज ने सारी पृथ्वी उन्हें दान में दे दी थी। बलि महाराज के वीर्य से उत्पन्न बाणासुर शिवजी का महान् भक्त हो गया। उसका आचरण सदैव सम्मानित था। वह उदार, बुद्धिमान, सत्यवादी तथा अपने व्रत का पक्का था। शोणितपुर नामक सुन्दर नगरी उसके अधीनस्थ में थी। चूँकि बाणासुर को शिवजी का वरदहस्त प्राप्त था इसलिए देवता तक तुच्छ दासों की तरह उसकी सेवा में लगे रहते थे। एक बार जब

शिवजी ताण्डव-नृत्य कर रहे थे तो बाण ने अपने एक हजार हाथों से वाद्य-यंत्र बजाकर उन्हें विशेष रूप से प्रसन्न कर लिया था।

भगवान्सर्वभूतेशः शरण्यो भक्तवत्सलः ।
वरेण छन्दयामास स तं वव्रे पुराधिपम् ॥ ३ ॥

शब्दार्थ

भगवान्—प्रभु; सर्व—समस्त; भूत—जीवगण के; ईशः—स्वामी; शरण्यः—शरण देने वाला; भक्त—अपने भक्तों के प्रति; वत्सलः—दयालु; वरेण—वर द्वारा; छन्दयाम् आस—तुष्ट किया; सः—उस बाण ने; तम्—उस (शिव) को; वव्रे—चुना; पुर—अपनी नगरी का; अधिपम्—प्रहरी, संरक्षक।

समस्त जीवों के स्वामी, अपने भक्तों के दयामय आश्रय ने बाणासुर को उसका मनचाहा वर देकर खूब प्रसन्न कर दिया। बाण ने उन्हें (शिवजी को) अपनी नगरी के संरक्षक के रूप में चुना।

स एकदाह गिरिशं पार्श्वस्थं वीर्यदुर्मदः ।
किरीटेनार्कवर्णेन संस्पृशंस्तत्पदाम्बुजम् ॥ ४ ॥

शब्दार्थ

सः—वह, बाणासुर; एकदा—एक बार; आह—बोला; गिरि-शम्—शिवजी से; पार्श्व—अपनी बगल में; स्थम्—उपस्थित; वीर्य—अपने बल से; दुर्मदः—उन्मत्त; किरीटेन—अपने मुकुट से; अर्क—सूर्य जैसे; वर्णेन—रंग वाले; संस्पृशन्—छूते हुए; तत्—उसके, शिवजी के; पद-अम्बुजम्—चरणकमल।

बाणासुर अपने बल से उन्मत्त था। एक दिन जब शिवजी उसकी बगल में खड़े थे, तो बाणासुर ने अपने सूर्य जैसे चमचमाते मुकुट से उनके चरणकमलों का स्पर्श किया और उनसे इस प्रकार कहा।

नमस्ये त्वां महादेव लोकानां गुरुमीश्वरम् ।
पुंसामपूर्णकामानां कामपूरामराङ्घ्रिपम् ॥ ५ ॥

शब्दार्थ

नमस्ये—मैं नमस्कार करता हूँ; त्वाम्—तुमको; महा-देव—हे देवताओं में सबसे महान्; लोकानाम्—सारे लोकों के; गुरुम्—आध्यात्मिक गुरु को; ईश्वरम्—नियन्ता को; पुंसाम्—मनुष्यों के लिए; अपूर्ण—अपूर्ण; कामानाम्—इच्छाओं वाले; काम-पूर—इच्छा पूरी करते हुए; अमर-अङ्घ्रिपम्—स्वर्ग के वृक्ष या कल्पवृक्ष (सदृश)।

[बाणासुर ने कहा] : हे महादेव, मैं समस्त लोकों के आध्यात्मिक गुरु तथा नियन्ता, आप को नमस्कार करता हूँ। आप उस स्वर्गिक-वृक्ष की तरह हैं, जो अपूर्ण इच्छाओं वाले व्यक्तियों की इच्छाएँ पूरी करता है।

दोःसहस्त्रं त्वया दत्तं परं भाराय मेऽभवत् ।
त्रिलोक्यां प्रतियोद्धारं न लभे त्वदृते समम् ॥ ६ ॥

शब्दार्थ

दोः—भुजाएँ; सहस्त्रम्—एक हजार; त्वया—तुम्हारे द्वारा; दत्तम्—प्रदान की हुई; परम्—केवल; भाराय—बोझ; मे—मेरे लिए; अभवत्—बन गई हैं; त्रि-लोक्यम्—तीनों लोकों में; प्रतियोद्धारम्—विपक्षी योद्धा; न लभे—मुझे नहीं मिल रहा; त्वत्—तुम्हारे; ऋते—सिवाय; समम्—समान।

आपके द्वारा प्रदत्त ये एक हजार भुजाएँ मेरे लिए केवल भारी बोझ बनी हुई हैं। तीनों लोकों में मुझे आपके सिवाय लड़ने के योग्य कोई व्यक्ति नहीं मिल पा रहा।

तात्पर्य : आचार्यों के अनुसार बाणासुर के कहने का भाव यह है ''अत: जब मैं आपको हरा चुकूँगा तो मेरी दिग्विजय पूरी हो जायेगी और युद्ध करने की मेरी इच्छा तुष्ट हो जायेगी।''

कण्डूत्या निभृतैर्दोर्भिर्युयुत्सुर्दिग्गजानहम् ।
आद्यायां चूर्णयन्नद्रीन्भीतास्तेऽपि प्रदुद्रुवुः ॥ ७ ॥

शब्दार्थ

कण्डूत्या—खुजलाती; निभृतैः—पूरित; दोर्भिः—मेरी भुजाओं से; युयुत्सुः—लड़ने के लिए उत्सुक; दिक्—दिशाओं के; गजान्—हाथियों से; अहम्—मैं; आद्य—हे आदि-देव; अयम्—गया; चूर्णयन्—चूर्ण करते हुए; अद्रीन्—पर्वतों को; भीताः—भयभीत; ते—वे; अपि—भी; प्रदुद्रुवुः—भाग गये।

हे आदि-देव, दिशाओं पर शासन करने वाले हाथियों से लड़ने के लिए उत्सुक मैं युद्ध के लिए खुजला रही अपनी भुजाओं से पर्वतों को चूर करते हुए आगे बढ़ता गया। किन्तु वे बड़े बड़े हाथी भी डर के मारे भाग गये।

तच्छ्रुत्वा भगवान्क्रुद्धः केतुस्ते भज्यते यदा ।
त्वद्दर्पघ्नं भवेन्मूढ संयुगं मत्समेन ते ॥ ८ ॥

शब्दार्थ

तत्—वह; श्रुत्व—सुनकर; भगवान्—भगवान्; क्रुद्धः—क्रुद्ध; केतुः—ध्वजा; ते—तुम्हारी; भज्यते—टूट जायेगी; यदा—जब; त्वत्—तुम्हारा; दर्प—घमंड; घ्नम्—विनष्ट; भवेत्—हो जायेगा; मूढ—रे मूर्ख; संयुगम्—युद्ध में; मत्—मेरे; समेन—समान वाले से; ते—तुम्हारा।

यह सुनकर शिवजी क्रुद्ध हो उठे और बोले, ''रे मूर्ख! जब तू मेरे समान व्यक्ति से युद्ध कर चुकेगा तो तेरी ध्वजा टूट जायेगी। उस युद्ध से तेरा दर्प नष्ट हो जायेगा।''

तात्पर्य : शिवजी चाहते तो तुरन्त ही बाणासुर को दण्ड देते और उसका गर्व चूर कर देते लेकिन बाणासुर उनका इतना आज्ञाकारी सेवक था कि शिवजी ने ऐसा नहीं किया।

इत्युक्तः कुमतिर्हृष्टः स्वगृहं प्राविशन्नृप ।
प्रतीक्षन्गिरिशादेशं स्ववीर्यनशनम्कुधीः ॥ ९ ॥

शब्दार्थ

इति—इस प्रकार; उक्तः—कहे जाने पर; कु-मतिः—मूर्ख; हृष्टः—प्रसन्न; स्व—अपने; गृहम्—घर में; प्राविशत्—प्रवेश किया; नृप—हे राजा (परीक्षित); प्रतीक्षन्—प्रतीक्षा करते हुए; गिरिश—शिव की; आदेशम्—भविष्यवाणी को; स्व-वीर्य—अपने पराक्रम से; नशनम्—विनाश; कु-धीः—अज्ञानी।

इस प्रकार उपदेश दिये जाने पर अज्ञानी बाणासुर प्रसन्न हुआ। तत्पश्चात् हे राजन्, गिरीश ने जो भविष्यवाणी की थी उसकी प्रतीक्षा करने—अपने पराक्रम के विनाश की प्रतीक्षा करने—वह अपने घर चला गया।

तात्पर्य : यहाँ पर बाणासुर को *कुधी* तथा *कुमति* बतलाया गया है क्योंकि उसने वास्तविक स्थिति का दूसरा ही अर्थ लगाया। यह असुर इतना गर्वीला था कि उसे विश्वास हो गया कि उसे कोई भी नहीं हरा सकता। वह यह सुनकर प्रसन्न था कि शिवजी जितना बलशाली कोई व्यक्ति उससे लड़ने आयेगा और युद्ध करने की उसकी खुजलाहट को दूर करेगा। यद्यपि शिवजी ने यह बतला दिया था कि वह व्यक्ति बाणासुर की ध्वजा तोड़ कर उसके पराक्रम को चूर-चूर कर देगा किन्तु वह इतना मूर्ख था कि उसने उस कथन को गम्भीरता से नहीं लिया और उत्सुकतापूर्वक युद्ध करने की प्रतीक्षा करने लगा।

आज के समय में भी भौतिकतावादी व्यक्ति इन्द्रिय-तृप्ति की नाना अभूतपूर्व सुविधाओं से प्रसन्न हो जाते हैं। यद्यपि उनको यह स्पष्ट रहता है कि व्यष्टि तथा समष्टि रूप से मृत्यु उनके पास आ रही है किन्तु आधुनिक इन्द्रियलोलुप अपरिहार्य विनाश को भूले हुए हैं। जैसाकि *भागवत* (२.१.४) में कहा गया है—*पश्यन्नपि न पश्यति*—यद्यपि उनका विनाश सन्निकट होता है किन्तु यौन-सुख तथा पारिवारिक अनुरक्ति के कारण वे मदान्ध रहते हैं और अंधे की भाँति उसे नहीं देखते हैं। इसी तरह बाणासुर अपने भौतिक पराक्रम के कारण मदोन्मत्त था और उसे विश्वास ही नहीं हो रहा था कि उसका पतन होने वाला है।

तस्योषा नाम दुहिता स्वप्ने प्राद्युम्निना रतिम् ।
कन्यालभत कान्तेन प्रागदृष्टश्रुतेन सा ॥ १० ॥

शब्दार्थ

तस्य—उसकी; ऊषा नाम—उषा नामक; दुहिता—पुत्री; स्वप्ने—स्वप्न में; प्राद्युम्निना—प्रद्युम्न के पुत्र (अनिरुद्ध) के साथ; रतिम्—संभोग; कन्या—अविवाहिता कुमारी; अलभत—प्राप्त किया; कान्तेन—अपने प्रेमी के साथ; प्राक्—इसके पूर्व; अदृष्ट—कभी न देखा हुआ; श्रुतेन—या सुना हुआ; सा—उसने।

बाण की पुत्री कुमारी ऊषा ने स्वप्न में प्रद्युम्न के पुत्र के साथ संभोग किया यद्यपि उसने इसके पूर्व कभी भी अपने प्रेमी को देखा या सुना नहीं था।

तात्पर्य : अब जो घटनाएँ वर्णित होंगी उनसे शिवजी द्वारा भविष्यवाणी किया गया युद्ध होगा। श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर ने *विष्णु पुराण* के निम्नलिखित श्लोक उद्धृत किये हैं, जो उषा के स्वप्न को बतलाने वाले हैं—

ऊषा बाणसुता विप्र पार्वतीम् शम्भुना सह।

क्रीडन्तीमुपलक्ष्योच्चै स्पृहां चक्रे तदाश्रयाम्॥

''हे ब्राह्मण! जब बाण-पुत्री उषा ने पार्वती को अपने पति शम्भु के साथ क्रीड़ा करते देखा तो उषा को भी वही भाव अनुभव करने की तीव्र इच्छा हुई।''

ततः सकलचित्तज्ञा गौरी तामाह भाविनीम्।

अलमत्यर्थतापेन भर्ता त्वमपि रंस्यसे॥

''उस समय हर हृदय की बात जानने वाली देवी गौरी (पार्वती) ने उस भावुक तरुणी से कहा, ''तुम इतनी विचलित मत होओ। तुम्हें अपने पति के साथ रमण करने का अवसर प्राप्त होगा।''

इत्युक्ता सा तदा चक्रे कदेति मतिमात्मनः।

को वा भर्ता ममेत्येनां पुनरप्याह पार्वती॥

''यह सुनकर उषा ने मन में सोचा, ''किन्तु कब? और कौन होगा मेरा पति?'' इसके उत्तर में पार्वती ने एक बार फिर कहा।''

वैशाखशुक्लद्वादश्यां स्वप्ने योऽभिभवं तव।

करिष्यति स ते भर्ता राजपुत्री भविष्यति॥

''हे राजकुमारी! वैशाख मास के शुक्ल पक्ष की द्वादशी को स्वप्न में जो व्यक्ति तुम्हारे पास आयेगा वही तुम्हारा पति बनेगा।''

सा तत्र तमपश्यन्ती क्वासि कान्तेति वादिनी ।

सखीनां मध्य उत्तस्थौ विह्वला व्रीडिता भृशम् ॥ ११ ॥

शब्दार्थ

सा—वह; तत्र—वहाँ (स्वप्न में); तम्—उसको; अपश्यन्ती—न देखती हुई; क्व—कहाँ; असि—हो; कान्त—मेरे प्रिय; इति—इस प्रकार; वादिनी—बोलती हुई; सखीनाम्—अपनी सखियों के; मध्ये—बीच में; उत्तस्थौ—उठी; विह्वला—विक्षुब्ध; व्रीडिता—चिन्तित; भृशम्—अत्यधिक।

स्वप्न में उसे न देखकर ऊषा अपनी सखियों के बीच में यह चिल्लाते हुए अचानक उठ बैठी, ''कहाँ हो, मेरे प्रेमी?'' वह अत्यन्त विचलित एवं हड़बड़ाई हुई थी।

तात्पर्य : चेत होने पर तथा यह स्मरण करके कि वह अपनी सखियों के बीच में है इस प्रकार से चिल्ला उठने से उषा के लिए उलझन में होना स्वाभाविक था। साथ ही वह उस प्रेमी व्यक्ति के प्रति अनुरक्ति के कारण भी विह्वल थी जो उसे स्वप्न में दिखा था।

बाणस्य मन्त्री कुम्भाण्डश्चित्रलेखा च तत्सुता ।
सख्यपृच्छत्सखीमूषां कौतूहलसमन्विता ॥ १२ ॥

शब्दार्थ

बाणस्य—बाण का; मन्त्री—सचिव; कुम्भाण्डः—कुम्भाण्ड; चित्रलेखा—चित्रलेखा; च—तथा; तत्—उसकी; सुता—पुत्री; सखी—सहेली; अपृच्छत्—पूछा; सखीम्—अपनी सहेली; ऊषाम्—उषा से; कौतूहल—उत्सुकता से; समन्विता—पूर्ण।

बाणासुर का मंत्री कुम्भाण्ड था जिसकी पुत्री चित्रलेखा थी। वह ऊषा की सखी थी, अतः उसने उत्सुकतापूर्वक अपनी सखी से पूछा।

कं त्वं मृगयसे सुभ्रु कीदृशस्ते मनोरथः ।
हस्तग्राहं न तेऽद्यापि राजपुत्र्युपलक्षये ॥ १३ ॥

शब्दार्थ

कम्—किसको; त्वम्—तुम; मृगयसे—ढूँढ़ रही हो; सु-भ्रु—हे सुन्दर भौंहों वाली; कीदृषः—किस तरह की; ते—तुम्हारी; मनः-रथः—लालसा; हस्त—हाथ का; ग्राहम्—ग्रहण करने वाला; न—नहीं; ते—तुम्हारा; अद्य अपि—आज तक; राज-पुत्रि—हे राजकुमारी; उपलक्षये—मैं देख रही हूँ।

[चित्रलेखा ने कहा]: हे सुन्दर भौंहों वाली, तुम किसे ढूँढ़ रही हो? तुम यह कौन-सी इच्छा अनुभव कर रही हो? हे राजकुमारी, अभी तक मैंने किसी को तुमसे पाणिग्रहण करते नहीं देखा।

दृष्टः कश्चिन्नरः स्वप्ने श्यामः कमललोचनः ।
पीतवासा बृहद्बाहुर्योषितां हृदयंगमः ॥ १४ ॥

शब्दार्थ

दृष्टः—देखा हुआ; कश्चित्—कोई; नरः—मनुष्य; स्वप्ने—सपने में; श्यामः—गहरा नीला, साँवला; कमल—कमल सदृश; लोचनः—आँखों वाला; पीत—पीला; वासाः—वस्त्र धारण किये; बृहत्—बलिष्ठ; बाहुः—बाहों वाला; योषिताम्—स्त्रियों के; हृदयम्—हृदयों को; गमः—स्पर्श करता हुआ।

[ऊषा ने कहा] : मैंने सपने में एक पुरुष देखा जिसका रंग साँवला था, जिसकी आँखें कमल जैसी थीं, जिसके वस्त्र पीले थे और भुजाएँ बलिष्ठ थीं। वह ऐसा था, जो स्त्रियों के हृदयों को स्पर्श कर जाता है।

तमहं मृगये कान्तं पाययित्वाधरं मधु ।
क्वापि यातः स्पृहयतीं क्षिप्त्वा मां वृजिनार्णवे ॥ १५ ॥

शब्दार्थ

तम्—उस; अहम्—मैं; मृगये—ढूँढ़ रही हूँ; कान्तम्—प्रेमी को; पाययित्वा—पिलाकर; आधरम्—अपने होंठों की; मधु—शहद; क्व अपि—कहीं; यातः—चला गया है; स्पृहयतीम्—उसके लिए लालायित, तरसती; क्षिप्त्वा—फेंक कर; माम्—मुझको; वृजिन—दुख के; अर्णवे—समुद्र में।

मैं उसी प्रेमी को ढूँढ़ रही हूँ। मुझे अपने अधरों की मधु पिलाकर वह कहीं और चला गया है और इस तरह उसने मुझे दुख के सागर में फेंक दिया है। मैं उसके लिए अत्यधिक लालायित हूँ।

चित्रलेखोवाच
व्यसनं तेऽपकर्षामि त्रिलोक्यां यदि भाव्यते ।
तमानेष्ये वरं यस्ते मनोहर्ता तमादिश ॥ १६ ॥

शब्दार्थ

चित्रलेखा उवाच—चित्रलेखा ने कहा; व्यसनम्—दुख; ते—तुम्हारा; अपकर्षामि—दूर कर लूँगी; त्रि-लोक्याम्—तीनों लोकों में; यदि—यदि; भाव्यते—मिल पायेगा; तम्—उसको; आनेष्ये—लाऊँगी; वरम्—होने वाले पति को; यः—जो; ते—तुम्हारा; मनः—हृदय का; हर्ता—चोर; तम्—उसको; आदिश—जरा संकेत तो करो।

चित्रलेखा ने कहा : मैं तुम्हारी व्याकुलता दूर कर दूँगी। यदि वह तीनों लोकों के भीतर कहीं भी मिलेगा तो मैं तुम्हारे चित्त को चुराने वाले इस भावी पति को ले आऊँगी। तुम मुझे बतला दो कि आखिर वह है कौन।

तात्पर्य : यह बात रुचिकर है कि चित्रलेखा नाम ऐसी स्त्री का सूचक है जो चित्र बनाने में निपुण हो। *चित्र* का अर्थ है ''उत्तम'' या ''नाना प्रकार के'' और *लेखा* का अर्थ है ''चित्र बनाने की कला।'' जैसाकि अगले श्लोक में बतलाया गया है चित्रलेखा अपने नाम को सार्थक कर देती है।

इत्युक्त्वा देवगन्धर्व सिद्धचारणपन्नगान् ।

दैत्यविद्याधरान्यक्षान्मनुजांश्च यथालिखत् ॥ १७॥

शब्दार्थ

इति—इस प्रकार; उक्त्वा—कह कर; देव-गन्धर्व—देवताओं तथा गन्धर्वों; सिद्ध-चारण-पन्नगान्—सिद्धों, चारणों तथा पन्नगों को; दैत्य-विद्याधरान्—असुरों तथा विद्याधरों को; यक्षान्—यक्षों को; मनु-जान्—मनुष्यों को; च—भी; यथा—सही सही; अलिखत्—उसने चित्रित किया।

यह कह कर चित्रलेखा विविध देवताओं, गन्धर्वों, सिद्धों, चारणों, पन्नगों, दैत्यों, विद्याधरों, यक्षों तथा मनुष्यों के सही सही चित्र बनाती गयी।

मनुजेषु च सा वृष्नीन्शूरमानकदुन्दुभिम् ।
व्यलिखद्रामकृष्णौ च प्रद्युम्नं वीक्ष्य लज्जिता ॥ १८॥
अनिरुद्धं विलिखितं वीक्ष्योषावाङ्मुखी ह्रिया ।
सोऽसावसाविति प्राह स्मयमाना महीपते ॥ १९॥

शब्दार्थ

मनुजेषु—मनुष्यों में से; च—तथा; सा—वह (चित्रलेखा); वृष्णीन्—वृष्णियों को; शूरम्—शूरसेन को; आनकदुन्दुभिम्—वसुदेव को; व्यलिखत्—अंकित किया; राम-कृष्णौ—बलराम तथा कृष्ण; च—और; प्रद्युम्नम्—प्रद्युम्न को; वीक्ष्य—देखकर; लज्जिता—लज्जित होकर; अनिरुद्धम्—अनिरुद्ध को; विलिखितम्—अंकित किया हुआ; वीक्ष्य—देखकर; ऊषा—उषा; अवाक्—झुकाकर; मुखी—अपना सिर; ह्रिया—उलझन से; सः असौ असौ इति—''वही है, वही है''; प्राह—उसने कहा; स्मयमाना—हँसती हुई; मही-पते—हे राजन्।

हे राजन्, चित्रलेखा ने मनुष्यों में से वृष्णियों के चित्र खींचे जिनमें शूरसेन, आनकदुन्दुभि, बलराम तथा कृष्ण सम्मिलित थे। जब ऊषा ने प्रद्युम्न का चित्र देखा तो वह लजा गई और जब उसने अनिरुद्ध का चित्र देखा तो उलझन के मारे उसने अपना सिर नीचे झुका लिया। उसने हँसते हुए कहा, ''यही है, यही है, वह।''

तात्पर्य : श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती और भी अन्तर्दृष्टि देते हैं: जब उषा ने प्रद्युम्न का चित्र देखा तो वह लज्जित हो उठी क्योंकि उसने सोचा, ''यह तो मेरे श्वसुर हैं,'' तब उसने अपने प्रेमी अनिरुद्ध का चित्र देखा और हर्ष के मारे चीख उठी।

चित्रलेखा तमाज्ञाय पौत्रं कृष्णस्य योगिनी ।
ययौ विहायसा राजन्द्वारकां कृष्णपालिताम् ॥ २०॥

शब्दार्थ

चित्रलेखा—चित्रलेखा; तम्—उसको; आज्ञाय—पहचान कर; पौत्रम्—पौत्र के रूप में; कृष्णस्य—कृष्ण के; योगिनी—योगिन; ययौ—गई; विहायसा—आकाश-मार्ग द्वारा; राजन्—हे राजन्; द्वारकाम्—द्वारका; कृष्ण-पालिताम्—कृष्ण द्वारा रक्षित।

योगशक्ति से चित्रलेखा ने उसे कृष्ण के पौत्र (अनिरुद्ध) रूप में पहचान लिया। हे राजन्,

तब वह आकाश-मार्ग से द्वारका नगरी गई जो कृष्ण के संरक्षण में थी।

तत्र सुप्तं सुपर्यङ्के प्राद्युम्निं योगमास्थिता ।
गृहीत्वा शोणितपुरं सख्यै प्रियमदर्शयत् ॥ २१ ॥

शब्दार्थ

तत्र—वहाँ; सुप्तम्—सोया हुआ; सु—सुन्दर; पर्यङ्के—बिस्तर पर; प्रद्युम्निम्—प्रद्युम्न के पुत्र को; योगम्—योगशक्ति; आस्थिता—प्रयोग करते हुए; गृहीत्वा—लेकर; शोणित-पुरम्—बाणासुर की राजधानी, शोणितपुर में; सख्यै—अपनी सखी के पास; प्रियम्—उसके प्रेमी को; अदर्शयत्—दिखलाया।

वहाँ पर उसने प्रद्युम्न-पुत्र अनिरुद्ध को एक सुन्दर बिस्तर पर सोते पाया। उसे वह अपनी योगशक्ति से शोणितपुर ले गई जहाँ उसने अपनी सखी ऊषा को उसका प्रेमी लाकर भेंट कर दिया।

तात्पर्य : श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ने इस श्लोक की टीका इस प्रकार की है : ''यहाँ यह बतलाया गया है कि चित्रलेखा ने योगशक्ति का प्रयोग किया (*योगमास्थिता*)। जैसाकि *हरिवंश* तथा अन्य ग्रन्थों में बतलाया गया है, उसे अपनी शक्ति का प्रयोग इसलिए करना पड़ा क्योंकि जब वह द्वारका पहुँची तो वह भगवान् कृष्ण की नगरी में प्रवेश करने में अपने को अक्षम पा रही थी। उसी समय श्री नारदमुनि ने उसे प्रवेश करने की योग-कला का उपदेश दिया। कुछ विद्वानों का यह भी कहना है कि चित्रलेखा स्वयं योगमाया की अंश थी।''

सा च तं सुन्दरवरं विलोक्य मुदितानना ।
दुष्प्रेक्ष्ये स्वगृहे पुम्भी रेमे प्राद्युम्निना समम् ॥ २२ ॥

शब्दार्थ

सा—वह; च—तथा; तम्—उसको; सुन्दर-वरम्—अतीव सुन्दर पुरुष; विलोक्य—देखकर; मुदित—प्रसन्न; आनना—मुख वाली; दुष्प्रेक्ष्ये—जो देखा नहीं जा सकता था; स्व—अपने; गृहे—घर में; पुम्भिः—पुरुषों द्वारा; रेमे—उसने रमण किया; प्रद्युम्निना समम्—प्रद्युम्न के पुत्र के साथ।

जब ऊषा ने पुरुषों में सर्वाधिक सुन्दर उस पुरुष को देखा तो प्रसन्नता के मारे उसका चेहरा खिल उठा। वह प्रद्युम्न के पुत्र को अपने निजी कक्ष में ले गयी जिसे मनुष्यों को देखने तक की मनाही थी और वहाँ उसने उसके साथ रमण किया।

परार्ध्यवासःस्रग्गन्धधूपदीपासनादिभिः ।
पानभोजनभक्ष्यैश्च वाक्यैः शुश्रूषणार्चितः ॥ २३ ॥

गूढः कन्यापुरे शश्वत्प्रवृद्धस्नेहया तया ।
नाहर्गणान्स बुबुधे ऊषयापहृतेन्द्रियः ॥ २४॥

शब्दार्थ

परार्ध्य—अमूल्य; वासः—वस्त्रों; स्रक्—मालाओं; गन्ध—सुगन्धियों; धूप—धूप; दीप—दीपकों; आसन—बैठने के स्थान; आदिभिः—इत्यादि के द्वारा; पान—पेयों; भोजन—चबाकर खाया जाने वाला भोजन; भक्ष्यैः—बिना चबाये खाया जाने वाला भोजन; च—भी; वाक्यैः—शब्दों से; शुश्रूषण—श्रद्धापूर्ण सेवा से; अर्चितः—पूजा किया गया; गूढः—छिपाकर रखा; कन्या-पुरे—कुमारियों के कक्ष में; शश्वत्—निरन्तर; प्रवृद्ध—अत्यधिक बढ़ा हुआ; स्नेहया—स्नेह से; तया—उसके द्वारा; न—नहीं; अहः-गणान्—दिन; सः—वह; बुबुधे—देखा; ऊषया—उषा द्वारा; अपहृत—मोड़ी हुई, वशीभूत; इन्द्रियः—उसकी इन्द्रियाँ।

ऊषा ने अमूल्य वस्त्रों के साथ साथ मालाएँ, सुगन्धियाँ, धूप, दीपक, आसन इत्यादि देकर श्रद्धापूर्ण सेवा द्वारा अनिरुद्ध की पूजा की। उसने उसे पेय, सभी प्रकार के भोजन तथा मधुर शब्द भी प्रदान किये। इस तरह तरुणियों के कक्ष में छिप कर रहते हुए अनिरुद्ध को समय बीतने का कोई ध्यान न रहा क्योंकि उसकी इन्द्रियाँ ऊषा द्वारा मोहित कर ली गई थीं। उसके प्रति ऊषा का स्नेह निरन्तर बढ़ता जा रहा था।

तां तथा यदुवीरेण भुज्यमानां हतव्रताम् ।
हेतुभिर्लक्षयां चक्रुरापृईतां दुरवच्छदैः ॥ २५॥
भटा आवेदयां चक्रू राजंस्ते दुहितुर्वयम् ।
विचेष्टितं लक्षयाम कन्यायाः कुलदूषणम् ॥ २६॥

शब्दार्थ

ताम्—उसको; तथा—इस प्रकार; यदु-वीरेण—यदुओं के वीर द्वारा; भुज्यमानाम्—भोग किया जाता; हत—टूटा; व्रताम्—(कौमार्य) व्रत; हेतुभिः—लक्षणों से; लक्षयाम् चक्रुः—उन्होंने निश्चित किया; आ-प्रीताम्—जो अत्यधिक सुखी था; दुरवच्छदैः—वेश बदलना असम्भव; भटाः—रक्षिकाएँ; आवेदयाम् चक्रुः—घोषित किया; राजन्—हे राजन्; ते—तुम्हारी; दुहितुः—पुत्री का; वयम्—हमने; विचेष्टितम्—अनुचित आचरण; लक्षयामः—देखा है; कन्यायाः—कुमारी का; कुल—परिवार; दूषणम्—बट्टा लगाने वाला।

अंत में रक्षिकाओं ने ऊषा में संभोग (सहवास) के अचूक लक्षण देखे जिसने अपना कौमार्य-व्रत भंग कर दिया था और यदुवीर द्वारा भोगी जा रही थी तथा जिसमें माधुर्य-सुख के लक्षण प्रकट हो रहे थे। ये रक्षिकाएँ बाणासुर के पास गईं और उससे कहा, ''हे राजन्, हमने आपकी पुत्री में अनुचित आचरण देखा है, जो किसी तरुणी के परिवार की ख्याति को नष्ट-भ्रष्ट करने वाला है।''

तात्पर्य : श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर ने *भटाः* शब्द की परिभाषा ''स्त्री रक्षिका'' दी है, जबकि जीव गोस्वामी इसकी परिभाषा ''जनखा तथा अन्य'' के रूप में दी है। व्याकरण की दृष्टि से दोनों ही ठीक हैं।

रक्षकों को भय था कि यदि बाणासुर को अन्य स्रोत से उषा के कार्यकलापों का पता चल जायेगा तो वह उन्हें कठोर दण्ड देगा इसीलिए उन्होंने स्वयं जाकर उसे जानकारी दी कि उसकी युवा पुत्री अब निर्दोष नहीं रही।

अनपायिभिरस्माभिर्गुप्तायाश्च गृहे प्रभो ।
कन्याया दूषणं पुम्भिर्दुष्प्रेक्ष्याया न विद्महे ॥ २७॥

शब्दार्थ

अनपायिभि:—जो कभी बाहर नहीं गये; अस्माभि:—हमारे द्वारा; गुप्ताया:—जिसकी रखवाली की जा रही हो, उसका; च—तथा; गृहे—महल के भीतर; प्रभो—हे स्वामी; कन्याया:—कुमारी का; दूषणम्—दूषित होना; पुम्भि:—मनुष्यों द्वारा; दुष्प्रेक्ष्याया:—जिसको देख पाना असम्भव हो; न विद्महे—हमारी समझ में नहीं आता।

''हे स्वामी, हम अपने स्थानों से कहीं नहीं हटीं और सतर्कतापूर्वक उसकी निगरानी करती रही हैं अत: यह हमारी समझ में नहीं आता कि यह कुमारी जिसे कोई पुरुष देख भी नहीं पा सकता महल के भीतर कैसे दूषित हो गई है।''

तात्पर्य : आचार्यों का कहना है कि *अनपायिभि:* का अर्थ ''कभी बाहर न जाते हुए'' अथवा ''कभी ठगे नहीं गये'' हो सकता है। यदि हम *दुष्प्रेक्ष्याया* के स्थान पर *दुष्प्रेष्याया:* पाठ मानें तो रक्षकगण उषा के विषय में कहते हैं, ''वह जिसकी दुष्ट सखी दूत बनाकर भेजी गई है।''

तत: प्रव्यथितो बाणो दुहितु: श्रुतदूषण: ।
त्वरित: कन्यकागारं प्राप्तोऽद्राक्षीद्यदूद्वहम् ॥ २८॥

शब्दार्थ

तत:—तब; प्रव्यथित:—अत्यन्त क्षुब्ध; बाण:—बाणासुर; दुहितु:—अपनी पुत्री का; श्रुत—सुना हुआ; दूषण:—कलंक, व्यभिचार; त्वरित:—तुरन्त; कन्यका—अविवाहित लड़कियों के; आगारम्—आवासों में; प्राप्त:—पहुँचकर; अद्राक्षीत्—देखा; यदु-उद्वहम्—यदुओं में सर्वाधिक प्रसिद्ध।

अपनी पुत्री के व्यभिचार को सुनकर अत्यन्त क्षुब्ध बाणासुर तुरन्त ही कुमारियों के आवासों की ओर लपका। वहाँ उसने यदुओं में विख्यात अनिरुद्ध को देखा।

कामात्मजं तं भुवनैकसुन्दरं
श्यामं पिशङ्गाम्बरमम्बुजेक्षणम् ।
बृहद्भुजं कुण्डलकुन्तलत्विषा
स्मितावलोकेन च मण्डिताननम् ॥ २९॥
दीव्यन्तमक्षै: प्रिययाभिनृम्णया

तदङ्गसङ्गस्तनकुङ्कुमस्रजम् ।
बाह्वोर्दधानं मधुमल्लिकाश्रितां
तस्याग्र आसीनमवेक्ष्य विस्मितः ॥ ३० ॥

शब्दार्थ

काम—कामदेव (प्रद्युम्न) के; आत्मजम्—पुत्र को; तम्—उस; भुवन—सारे लोकों का; एक—एकमात्र; सुन्दरम्—सौन्दर्य; श्यामम्—साँवले रंग का; पिशङ्ग—पीला; अम्बरम्—वस्त्र को; अम्बुज—कमलों जैसी; ईक्षणम्—आँखों को; बृहत्—बलवान; भुजम्—भुजाओं को; कुण्डल—कुण्डलों के; कुन्तल—तथा बालों के गुच्छों की; त्विषा—चमक से; स्मित—हँसते हुए; अवलोकेन—चितवनों से; च—भी; मण्डित—सुशोभित; आननम्—मुखमण्डल को; दीव्यन्तम्—खेलते हुए; अक्षैः—पाँसों से; प्रियया—अपनी प्रिया के साथ; अभिनृम्णया—सर्व मंगलमय; तत्—उसके साथ; अङ्ग—शारीरिक; सङ्ग—स्पर्श के कारण; स्तन—उसके स्तनों से; कुङ्कुम—कुंकुम से युक्त; स्रजम्—फूलमाला को; बाह्वोः—उसकी बाहुओं के बीच में; दधानम्—पहने; मधु—वसन्त ऋतु; मल्लिका—चमेली का; आश्रिताम्—बना हुआ; तस्याः—उसके; अग्रे—सामने; आसीनम्—बैठा हुआ; अवेक्ष्य—देखकर; विस्मितः—चकित।

बाणासुर ने अपने समक्ष अद्वितीय सौन्दर्य से युक्त, साँवले रंग का, पीतवस्त्र पहने कमल-जैसे नेत्रों वाले एवं विशाल बाहुओं वाले कामदेव के आत्मज को देखा। उसका मुखमंडल तेजोमय कुण्डलों तथा केश से तथा हँसीली चितवनों से सुशोभित था। जब वह अपनी अत्यन्त मंगलमयी प्रेमिका के सम्मुख बैठा हुआ उसके साथ चौसर खेल रहा था, तो उसकी भुजाओं के बीच में वासन्ती चमेली की माला लटक रही थी जिस पर कुंकुम पुता था, जो उसके द्वारा आलिंगन करने पर उसके स्तनों पर से माला में चुपड़ गया था। यह सब देखकर बाणासुर चकित था।

तात्पर्य : बाणासुर अनिरुद्ध की निर्भीकता पर चकित था: यह राजकुमार उस तरुणी के कक्ष में शान्तिपूर्वक बैठा था और बाणासुर की कुमारी कन्या के साथ खेल कर रहा था। वैदिक संस्कृति के परिप्रेक्ष्य में ऐसी घटना देखना अविश्वसनीय था।

स तं प्रविष्टं वृतमाततायिभि-
भर्भटैरनीकैरवलोक्य माधवः ।
उद्यम्य मौर्वं परिघं व्यवस्थितो
यथान्तको दण्डधरो जिघांसया ॥ ३१ ॥

शब्दार्थ

सः—वह, अनिरुद्ध; तम्—उसको, बाणासुर को; प्रविष्टम्—प्रविष्ट हुआ; वृतम्—घिरा हुआ; आततायिभिः—हथियार लिये हुए; भटैः—रक्षकों द्वारा; अनीकैः—अनेक; अवलोक्य—देखकर; माधवः—अनिरुद्ध; उद्यम्य—उठ कर; मौर्वम्—मुरु लोहे की बनी; परिघम्—गदा को; व्यवस्थितः—दृढ़तापूर्वक खड़े होकर; यथा—सदृश; अन्तकः—साक्षात् काल; दण्ड—डंडा; धरः—लिए हुए; जिघांसया—मारने के लिए उद्यत।

बाणासुर को अनेक सशस्त्र रक्षकों सहित घुसते हुए देखकर अनिरुद्ध ने अपनी लोहे की

गदा उठाई और अपने ऊपर आक्रमण करने वाले पर प्रहार करने के लिए सन्नद्ध होकर तनकर खड़ा हो गया। वह दण्डधारी साक्षात् काल की तरह लग रहा था।

तात्पर्य : उसकी गदा सामान्य लोहे की नहीं अपितु विशेष प्रकार के लोहे की—मुरु की—बनी थी।

जिघृक्षया तान्परितः प्रसर्पतः
शुनो यथा शूकरयूथपोऽहनत् ।
ते हन्यमाना भवनाद्विनिर्गता
निर्भिन्नमूर्धोरुभुजाः प्रदुद्रुवुः ॥ ३२ ॥

शब्दार्थ

जिघृक्षया—दबोच लेने के लिए; तान्—उनको; परितः—चारों ओर से; प्रसर्पतः—पास आकर; शुनः—कुत्ते; यथा—जिस प्रकार; शूकर—सुअरों के; यूथ—झुंड का; पः—नायक, अगुआ; अहनत्—उसने प्रहार किया; ते—वे; हन्यमानाः—प्रहार किये गये; भवनात्—महल से; विनिर्गताः—बाहर चले गये; निर्भिन्न—टूटे हुए; मूर्ध—सिर; ऊरु—जाँघें; भुजाः—तथा भुजाएँ; प्रदुद्रुवुः—वे भाग गये।

जब रक्षकगण उसे पकड़ने के प्रयास में चारों ओर से उसकी ओर टूट पड़े तो अनिरुद्ध ने उन पर उसी तरह वार किया जिस तरह कुत्तों पर सूअरों का झुंड मुड़ कर प्रहार करता है। उसके वारों से आहत रक्षकगण महल से अपनी जान बचाकर भाग गये। उनके सिर, जाँघें तथा बाहुएँ टूट गई थीं।

तं नागपाशैर्बलिनन्दनो बली
घ्नन्तं स्वसैन्यं कुपितो बबन्ध ह ।
ऊषा भृशं शोकविषादविह्वला
बद्धं निशम्याश्रुकलाक्ष्यरौत्सीत् ॥ ३३ ॥

शब्दार्थ

तम्—उसको; नाग-पाशैः—नाग-पाश से; बलि-नन्दनः—बलि-पुत्र (बाणासुर) ने; बली—बलशाली; घ्नन्तम्—प्रहार करते हुए; स्व—अपनी; सैन्यम्—सेना पर; कुपितः—क्रुद्ध होकर; बबन्ध ह—बाँध लिया; ऊषा—उषा; भृशम्—अत्यन्त; शोक—शोक; विषाद—तथा हताशा से; विह्वला—अभिभूत; बद्धम्—बँधा हुआ; निशम्य—सुनकर; अश्रु-कला—आँसुओं की बूँदों से; अक्षी—आँखों में; अरौत्सीत्—चिल्लाई।

किन्तु जब अनिरुद्ध बाण की सेना पर प्रहार कर रहा था, तो शक्तिशाली बलि-पुत्र ने क्रोधपूर्वक उसे नागपाश से बाँध लिया। जब ऊषा ने अनिरुद्ध का बाँधा जाना सुना तो वह शोक तथा विषाद से अभिभूत हो गई। उसकी आँखें आँसू से भर आईं और वह रोने लगी।

तात्पर्य : आचार्यों का कहना है कि बाणासुर भगवान् कृष्ण के बलवान पौत्र को वास्तव में बाँध

नहीं पाया। किन्तु भगवान् की लीला-शक्ति से ऐसा हो सका जिससे आगे होने वाली घटनाएँ घट सकें।

इस प्रकार श्रीमद्भागवत के दसवें स्कंध के अन्तर्गत ''ऊषा-अनिरुद्ध मिलन'' नामक बासठवें अध्याय के श्रील भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद के विनीत सेवकों द्वारा रचित तात्पर्य पूर्ण हुए।